प्रश्नोत्तर प्रवचनमाला

दो शब्द

न आदेश, न उपदेश

महावीर ने कहा हैः तीर्थंकर आदेश नहीं देते, उपदेश देते हैं। मैं उपदेश भी नहीं देता। आदेश-उपदेश का भेद समझ लो, तो तुम्हें यह भी समझ में आ जाएगा कि मैं उपदेश भी क्यों नहीं देता। आदेश का अर्थ होता हैः स्पष्ट सूचन, निर्देश, ऐसा करो। उसका जोर कृत्य पर होता है। सुबह ब्रह्ममुहूर्त में उठो--यह आदेश। उपदेश थोड़ा नाजुक, इतना स्पष्ट नहीं, इतना सीधा नहीं। उपदेश का अर्थ होता हैः मुझे देखो। उपदेश का शाब्दिक अर्थ होता है--मेरे पास बैठो। उप यानी पास; देश-स्थान। मेरे पास बैठो। जो अर्थ उपासना का होता है, वही उपदेश का। जो अर्थ उपवास का होता है, उपनिषद का होता है, वही उपदेश का।

महावीर ने कहा है कि तीर्थंकर आदेश नहीं देते। वे किसी को नहीं कहते कि ऐसा करो, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति की स्वतंत्रता को वे अंतिम मूल्य देते हैं। लेकिन तीर्थंकर उपदेश देते हैं। उपदेश का अर्थः मेरे पास बैठो, देखो, समझो, पहचानो। फिर उसके अनुसार जीओ।

यह परोक्ष आदेश हुआ। मैं ब्रह्ममुहूर्त में उठता हूं और तुम मेरे पास उठोगे, बैठोगे तो तुम भी ब्रह्ममुहूर्त में उठने लगोगे। मैंने कभी कहा नहीं कि ब्रह्ममुहूर्त में उठो, सीधे-सीधे नहीं कहा। लेकिन मेरे पास रहोगे... तो मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति अनुकरण की है। जैसा देखता है वैसा करने लगता है। जिनके संग होता है उन जैसा हो जाता है। चोरों के साथ रहोगे, चोर हो जाओगे। साधुओं के साथ रहोगे, साधु हो जाओगे। मगर न चोर होने में कुछ बड़ा मूल्य है और न साधु होने में बड़ा मूल्य है। क्योंकि दोनों हालत में तुमने अनुकरण ही तो किया। भेद क्या है?

मैं तुमसे कहता हूंः न मैं आदेश देता, न उपदेश देता। मैंने जो जाना है, जो मैंने जीया है, उसे सिर्फ अभिव्यक्त कर देता हूं। फिर तुम्हारी मौज है, तुम्हारी मर्जी। करने जैसा लगे, करना; न करने जैसा लगे, न करना। अनुकूल पड़े, करना। अनुकूल न पड़े, न करना। न तो तुम करोगे तो मैं प्रसन्न होऊंगा और न तुम न करोगे तो मैं अप्रसन्न होऊंगा। मेरी कोई अपेक्षा ही नहीं है।

मेरे संन्यासियों से मेरी कोई अपेक्षा नहीं है। मैं अपना जीवन तुम्हारे सामने खोल कर रख देता हूं। मैं अपनी जीवन-दृष्टि तुम्हारे समाने उघाड़ देता हूं। और मैं तुम्हारा धन्यवादी हूं, क्योंकि तुमने मेरी जीवन-दृष्टि को समझने योग्य समझा। तुमने इस योग्य भी समझा कि मेरे दो शब्द सुनते। तुम मानो, यह तो सवाल ही नहीं उठता। मैं कौन हूं जो तुम्हें कहूं कि तुम मानो? और अनजाने ढंग से तुम्हें मनाऊं, यह भी सवाल नहीं उठता, क्योंकि वह भी राजनीति हो जाएगी।

जैसे दीया जलता है; अब उसकी रोशनी का तुम्हें जो करना हो वह कर लो। फूल खिलता है; उसकी गंध का तुम्हें जो करना हो कर लो। न कोई आदेश है, न कोई उपदेश है। प्रार्थना कर सकता हूं--न आदेश, न उपदेश। निवेदन कर सकता हूं--न आदेश, न उपदेश।

इक न इक शमअ अंधेरे में जलाए रखिए
सुबह होने को है माहौल बनाए रखिए

जिनके हाथों से हमें जख्मे निहां पहुंचे हैं
वो ही कहते हैं कि जख्मों को छुपाए रखिए
इक न इक शमअ अंधेरे में जलाए रखिए

कौन जाने कि वो किस राहगुजर से गुजरे
हर गुजर-राह को फूलों से सजाए रखिए
इक न इक शमअ अंधेरे में जलाए रखिए

दामने यार की जीनत न बने हर आंसू
अपनी पलकों के लिए कुछ तो बचाए रखिए
इक न इक शमअ अंधेरे में जलाए रखिए

कौन जाने कि वो किस राहगुजर से गुजरे
हर राहगुजर को फूलों से सजाए रखिए
इक न इक शमअ अंधेरे में जलाए रखिए

और शमा तो जल ही रही है। जलाए रखिए, यह कहना भी शायद ठीक नहीं। लेकिन शमा जल रही है भीतर और आंखें तलाश रहीं बाहर; इससे तालमेल नहीं हो पाता। शमा कहीं, तुम कहीं। शमा भीतर, तुम बाहर। जरा भीतर लौट कर देखना शुरू करो।

घड़ी दो घड़ी चौबीस घंटे में चुप बैठ रहो, कुछ न करो। लेट रहो, पड़े रहो, जैसे हो ही नहीं, शून्यवत! और उसी शून्य में धीरे-धीरे भीतर की शमा स्पष्ट होने लगेगी, धुआं कट जाएगा। और जिस दिन भीतर का धुआं कटता है, आंखें स्पष्ट देखने में समर्थ हो जाती हैं--उस दिन तुम परमात्मा हो, सारा अस्तित्व परमात्मा है। और वह अनुभूति आनंद है, मुक्ति है, निर्वाण है।

--ओशो